आधुनिक युग में भगवद्गीता की प्रासांगिकता

डॉ० राकेश कुमार
गाँव – रुड़की (रोहतक)

शोधालेख सार

'भगवद् गीता' शब्द भगवत् और गीता दो शब्दों से मिलकर बना है, जिनका अर्थ है 'भगवान् का गीत'। गीता को केवल हिन्दुओं का धार्मिक एवं दार्शनिक ग्रंथ कहकर उसको सीमाओं में बांधना अल्प मति का कार्य है, क्योंकि यह तो निखिल विश्व का पथ निर्माता व ज्ञान प्रकाशक है। इसमें अठारह अध्याय तथा 700 श्लोकों का समावेश है। इसमें विद्यमान प्रत्येक श्लोक जीवन में धारण करने योग्य एवं जीवन रुपी नाव को सुचारु गति प्रदान करने वाला है। यह ग्रन्थ जीवन की समस्त बाधाओं, पीड़ाओं, दुःखों, समस्याओं को तर्क के द्वारा दूर कर मोक्ष की ओर अग्रसर करने वाला एवं मानव को निष्काम भाव से कर्त्तव्य की प्रेरणा देने वाला धार्मिक एवं मोक्षप्रद ग्रन्थ है। आधुनिक युग में मनुष्य दैनिक कार्यों में हितना मसगुल हो गया है कि निष्काम कर्म, त्याग, तप, दान, धर्म एवं मोक्षादि विषय उसके लिए स्वप्न मात्र बन गए हैं। अतः अद्यतन युग की इन छोटी–छोटी बुराईयों, समस्याओं के निर्वाणार्थ श्रीमद् भगवत् गीता की नितान्त आवश्यकता है। आज देश जिस परिस्थिति से गुजर रहा है, उसमें गीता का अनुसरण जरुरी है, पूरे समाज को गीता का संदेश प्रत्यक्ष रुप से जीवन में उतारना होगा, जिससे समाज में एकता एवं आत्मीयता की भावना का सरोवकार हो सके। यह ग्रन्थ कर्त्तव्यनिष्ठा से लेकर उत्कृष्ट जीवन जीने की कला तक समस्त प्रेरणा देता है। समाज में आज भी ऐसी अनेक विकृतियाँ व्याप्त हैं, जो प्राचीन समय से चली आ रही हैं, ऐसी सभी समस्याओं का समाधान गीता में समाहित है।

मूल शब्द : अराजकता, पारंगत, निर्वाणार्थ, कर्त्तव्यनिष्ठ, कीर्तिमान, अपयश, निष्काम, वांछित, शुद्धवैचारिक, तनावग्रस्त, आध्यात्मिक

भूमिका

भगवद् गीता हमारे धर्म एवं इमान का ताज है न कि महज एक ग्रन्थ। हिन्दुओं की प्रत्येक रीति–रिवाज गीता का अनुकरण करके सम्पन्न की जाती है। जितना अधिक महत्त्व प्राचीन समय में गीता का रहा है, उससे और भी अधिक आधुनिक युग में है परन्तु धर्म व राजनीति के नाम पर दुकानदारी करने वालों ने गीता के उपदेश को नाच, गाने–बजाने, कपड़े–जूते, गंदगी में स्नान करने रुपी व्यर्थ की बकबक करने को ही गीता की प्रासांगिकता का आदर्श मानकर हिन्दुत्व को पाखण्ड, ढ़ोंग व लूट का केन्द्र बना दिया

है। आज आवश्यकता है इस तरह की घटिया मानसिकता एवं विचारधारा को समूल नष्ट कर, गीता के वास्तविक संदेश व उपदेश की जो अन्याय, अधर्म और असत्य के विरुद्ध लड़कर उसे परास्त करना है।

गीता को विश्व की सबसे प्राचीन जीवित संस्कृति, भारत की महान् धार्मिक सभ्यता के प्रमुख साहित्यिक प्रमाण के रुप में देखा जा सकता है। पाश्चात्य जगत् में भारतीय साहित्य का कोई भी ग्रन्थ इतना अधिक उद्धरित नहीं हुआ, जितना भगवद्गीता, क्योंकि यही सर्वाधिक प्रिय है। आज देश बहुत ही विषम परिस्थितियों से गुजर रहा है। प्रतिदिन की इन विषमताओं तथा कौरवरुपी असामाजिक, अभद्र, निर्दयी, घुसपेटियों से लड़ने के लिए व्यक्ति को स्वयं ही अर्जन और अपने आप ही कृष्ण की भूमिका अदा करनी होगी क्योंकि समाज में हितनी असामाजिकता, अराजकता, दृष्टता, निर्धनता, भयादि का माहौल है, जिससे निपटने के लिए मनुष्य को स्वयं अर्जुन–कृष्ण बनने की नितान्त आवश्यकता है। हर मनुष्य किसी न किसी क्षेत्र में पारंगत होता है। यदि आप ईश्वर द्वारा प्रदत्त अपनी प्रतिभा का निष्काम भाव से वहन नहीं करते हो, तो आपको भी पूर्ण रुप से अपयश का सामना करना पड़ेगा। व्यक्ति को अपने कर्म को लेकर किसी भी तरह से विवश होने की जरूरत नहीं है। जब महारथी अर्जुन अधर्म के विरुद्ध युद्ध में भावनाओं में बहकर निर्बल हो जाते हैं, तो श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा, अपने–आप प्राप्त हुए और खुले हुए स्वर्ग के द्वार रुपी युद्ध को भाग्यशाली लोग ही प्राप्त हैं। यथा –

''यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम्।।''[1]

इस श्लोक के माध्यम से उस समय अर्जुन के समक्ष आई हुई परिस्थिति पर प्रकाश डाला गया है। परन्तु आज हमारे सामने भी अनेक – असामाजिक बुराईयाँ पनप रही हैं, आज हमें भी उनको मुँह तोड़ जवाब देकर नया कीर्तिमान स्थापित करना है। जिससे हम सही मायने में राष्ट्रभक्त व राष्ट्रनायक कहलाऐंगे, क्योंकि नैतिक कर्त्तव्य का पालन करना ही सही, राष्ट्र सेवा है, अन्यथा हमें भी अपयश का सामना करना पड़ेगा। इस संदर्भ में भगवान् कृष्ण ने कहा है ! पार्थ तुम्हारे मन में युद्ध न करने का कल्मष आया ही क्यों ? जीवन मूल्यों को जानने वाले व्यक्ति के लिए यह सर्वथा अनुचित है ऐसा करने से उच्च लोक की नहीं अपितु अपयश की प्राप्ति होती है। इसी का ही समर्थन करते हुए कहा है, हे ! अर्जुन यदि तुम युद्ध करने के स्वधर्म को सम्पन्न नहीं करते हो तो तुम्हें निश्चित रुप से अपने कर्त्तव्य की उपेक्षा करने का पाप लगेगा और तुम यौद्धा के रुप में भी अपना यश खो दोगे।

हे अर्जुन ! लोग सदैव तुम्हारे अपयश का वर्णन करेंगे और सम्मानित व्यक्ति के लिए अपयश तो मृत्यु से भी बढ़कर है। जिन–जिन महान् यौद्धाओं ने तुम्हारे नाम तथा यश को सम्मान दिया है, वे सब सोचेंगे कि तुमने मृत्यु के डर से युद्धभूमि छोड़ दी है तो वे तुम्हें तुच्छ मानेंगे, इसलिए हे कुन्ती पुत्र ! सुख–दुःख,

लाभ–हानि, विजय– पराजय, का विचार किए बिना निष्काम भाव से युद्ध करो, ऐसा करने से तुम पाप के भागी न होकर मोक्ष के अधिकारी बनोगे, और भी हे अर्जुन ! यदि युद्ध करते हुए तुम मारे जाओगे तो स्वर्ग प्राप्त करोगे, अगर तुम विजयी हुए तो पृथ्वी पर साम्राज्य करोगे, अतः दृढ निश्चिय होकर युद्ध करो, जो तुम्हारे करने योग्य श्रेष्ठ कर्म है। यथा –

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि।।[2]
अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम्।
सम्भावितस्य चाकीर्तिमरणादतिवरिच्यते।।[3]
भयाद्रणादुपरांत मंस्यते त्वां महारथाः।
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम्।[4]
अवाच्यवादांश्च बहून्वदिष्यन्ति तवाहिताः।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम्।।[5]
सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि।।[6]
हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा मोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुतिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः।।[7]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह बात कितनी कारगर एवं प्रायोगिक सिद्ध हो रही है, यह समझने का विषय है। यदि आज हम अपने मन की विवशता वश अपने आप को दुर्बल कर अपने देश, समाज, परिवार एवं स्वयं के विकास के लिए यदि योगदान नहीं देंगे तो विश्व गुरु भारत में उपस्थित समाज के अपयश को भोगने वाले बनेंगे। भारत कभी –कभी सोने की चिड़ियाँ, विश्व गुरु तथा विश्व में प्रथम विश्व विद्यालय स्थापित कर शौर्य एवं यश के लिए विख्यात था, जिसकी वैदिक संस्कृति, पवित्रता, धार्मिकता एवं नैतिकता पर हमें आज भी नाज है, तो उसके अपयश, अपकीर्ति, अपवित्रतादि के लिए हम भागीदार न बनकर भारतवर्ष की उन्नति में अपनी अहम् भूमिका अदा करें।

व्यक्ति को किसी भी प्रकार से व्याकुल नहीं होना चाहिए, अगर कोई भी अपने कर्म को लेकर व्याकुल हो जाता है तो उसकी आत्मा को वह प्रशन्नता, उमंग, हर्षोत्लास, प्राप्त नहीं होता जो श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा वांछित होता है। भगवद्गीता में सुख– दुःख का उदय एवं अन्तर्धान सर्दी व गर्मी की ऋतुओं के समान माना है। इनको विचलित होए बिना सरलता से सहन करना चाहिए, क्योंकि सुख–दुःख में समभाव रखने वाला पुरुष ही, निश्चित रुप से मुक्ति के योग्य होता है। यथा –

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्ण सुखदुःखदाः।

आगमापायिनोऽनिन्यास्तांस्तिक्षिस्व भारत।।[8]

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।

समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते।।[9]

आज व्यक्ति मशीनी सुख, सुविधाओं एवं उपभोग की वस्तुओं को ही अत्यधिक सुख समझकर अनवरत उनका अनुसरण कर रहा है, ये सब बुद्धिहीनता व अविवेकीपन की पहचान, निशानी है। इस तरह के अज्ञानी, अविवेकी पुरुष इन्द्रिय योग तथा भौतिक ऐश्वर्य के प्रति आसक्त व मोहग्रस्त हो जाते हैं, उनके मनों में भगवान् के प्रति भक्ति का दृढ़ निश्चय नहीं होता और वे अपनी मूर्खता का शिकार बार–बार होकर जीवन में व्यर्थ ही परेशान बने रहते हैं। यथा –

यामिमं पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः।

वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः।।[10]

कामात्मनः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम।

क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति।।[11]

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम्।

व्यवसायात्मिका बुद्धि समाधौ न विधीयते।।[12]

ऐसे लुभावने, मोहग्रस्तकारी लाभ तथा सुरक्षा की सारी चिन्ताओं से मुक्त होकर मनुष्य को आत्म–परायण, ज्ञानी, विवेकी, लोभरहित, निर्मोह एवं सुरक्षित करने वाले गीता संदेश को जीवन में उतारना चाहिए।

आधुनिक युग में भारत वर्ष के प्रत्येक व्यक्ति को सकारात्मक सत्य, छल रहित, दुष्टताविहिन, निष्ठावान्, कर्त्तव्यपूर्ण एवं निष्काम कर्म की महती आवश्यकता है। यह 'जरूरी नहीं है कि आज, अब, इस समय जिस कार्य को सम्पन्न कर रहे हैं, उसका फल वर्तमान समय में ही प्राप्त हो, क्योंकि व्यक्ति का कर्म करने में ही अधिकार है, फल प्राप्ति में नहीं, इसी संदर्भ में गीता भी यही उपदेश करती है। यथा –

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।[13]

उपसंहार

निष्काम कर्म में अपार शक्ति, सामर्थ्य शुद्धवैचारिक एवं पवित्र मानसिकता निगुढ़ होती है, जिसका लाभ केवल स्वयं अनवेषक मनुष्य ही नहीं अपितु पूरा विश्व प्राप्त करता है। आज हमें स्वर्ण चिड़िया भारत

देश को फिर से उन्नत, हर्षित, आनन्दमय, गौरवमय एवं उमंगपरिपूर्ण कर पूरे विश्व के लिए एक अनोखा संदेश प्रस्तुत करना है। प्रत्येक व्यक्ति तक गीता के उपदेश को पहुंचाकर हमारी प्राचीन, अद्भूत, गौरवमयी सभ्यता एवं संस्कृति का परिचय करवाना है, जो हमारा मूल नैतिक परम कर्त्तव्य है, ऐसा करके हम सब अपने देश प्रदेश, समाज व स्वयं को धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं वैचारिक रुप से उन्नत करने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं, जो हमारी शाश्वत सनातन धर्म हमें आज्ञा देता है। युवा पीढ़ी को नव राष्ट्र निर्माण में आ रही चुनौतियों का समाधान गीता ज्ञान में निहित है। यह हमें कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य से डट कर सामना करने की प्रेरणा देता है। गीता न्याय और नैतिकता का संदेश देने वाली एवं डिजिटल युग की तनावग्रस्त, असुरक्षित व दुविधा में पड़ी युवा पीढ़ी के लिए आध्यात्मिक औषधि है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

[1] श्रीमद्भगवत् गीता, 2.32
[2] वही, 2.33
[3] वही, 2.34
[4] वही, 2.35
[5] वही, 2.36
[6] वही, 2.38
[7] वही, 2.37
[8] वही, 2.14
[9] वही, 2.15
[10] वही, 2.42
[11] वही, 2.43
[12] वही, 2.44
[13] वही, 2.47